# मजलिस

**ज़ाकिर :** सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी रहमत मआब

बिसमिल्लाहिर्रमानिरहीम

अलहम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन। अररहमानिर्रहीम मालिके यौमिद्दीन।

जैसा कि मैं आपकी ख़िदमत में अर्ज़ कर चुका हूँ। चार पाँच साल पहले मैंने सूर–ए–हम्द को अपना उनवाने बयान क़रार दिया था लेकिन दस मजलिसों के बावजूद मैंने बहुत कोशिश की थी कि मतालिब को समेट लूँ लेकिन मतालिब पूरी तरह से मैं अदा नहीं कर सका था। यह सूरा बहुत ही अहम सूरा है। जिसकी तिलावत मुसलमानों पर हर नमाज़ में वाजिब है और सिर्फ एक ही मरतबा नहीं बल्कि हर नमाज़ में इसकी तिलावत दो मरतबा वाजिब है। दो रकअतें हैं। दो रकअतों से कम तो सिवाये नमाज़े वित्र के कोई नमाज़ है ही नहीं। नमाज़े शब में एक आख़री नमाज़ हैं जिसको नमाज़े वित्तर कहते है। इसके अलावा कोई नमाज़ दो रकअतों से कम नहीं होती और दोनों रकअतों में सूर–ए–हम्द की तिलावत लाज़मी और ज़रूरी है। और यह कोई इख़ेतलाफ़ी मसला नहीं है कि जनाब रिसालत मआब सल्लाहो अलैहि व आलेहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि "लासलात इल्ला बफ़ा तेहतुल किताब" बग़ैर फ़ातेहे किताब, बग़ैर सूर–ए–हम्द के नमाज़ नहीं। और यह भी उसकी अहम्मीयत की दलील है कि सफ़र में चार रकअती नमाजें क़स्र हो जाती हैं मगर वही रकअते क़स्र होती हैं जिनमें सूरए हम्द जुज़ नहीं है। कि सुर–ए–हम्द की तिलावत में कमी वाक़ेअ हो। इसी सूराए हम्द की इब्तेदाई आयतें हैं जिनकी मैंने आप के सामने तिलावत की है। अहम्मीयत के लिहाज़ से मैं चाहता हूँ कि जब हम तिलावत करें तो कुछ न कुछ जो कह रहे हैं उसके मतालिब की तरफ़ भी मुतवज्जेह रहें। ज़हन हाज़िर रहे। यानी एक तो यह होता है कि इंसान जब पढ़ता है तो बे सोचे समझे लफ़ज़ों को अदा कर लिया। आदत पड़ी होती है। आदत के मातहत अलफाज़ अदा होते चले जाते हैं। दिमाग़ दूसरी तरफ़ ज़हन दूसरी तरफ़ ख़यालात इधर–उधर भटके हुए। लफ़्जें जुबान से अदा हो रही हैं। एक तो यह है। इसमें खुज़ूअ या खुशूउ हासिल नहीं होता इसमें तवज्जो हासिल नहीं होती। इसमें ज़हन के दिमाग़ और क़ल्ब के ऊपर वह कैफ़ियत पैदा नहीं होती जो बारगाहे इलाही में हूज़ूर के वक्त होना चाहिए। आदतन पढ़ रहे हैं मालूम ही नहीं कि हम क्या कह रहे हैं लेकिन जब तवज्जो हो हम क्या कह रहे हैं किस के सामने हैं और किन अल्फाज़ में हम अपने जज़्बात को पेश कर रहे हैं। ज़हन जब मुतवज्जेह होता है किसी एक तरफ तो इधर–उधर भटकता नहीं।

ज़हने इंसानी कभी खाली नहीं रहता। हर शय सो जाती है मगर दो चीजें यानी दिल व दिमाग़ कभी नहीं सोते। दिल भी अपना काम करता रहता है। दिल और दिमाग़ कभी नहीं सोते और मुमकिन है उसकी वजह ये हो कि उरफ़े आम में दिल को शाह कहा जाता है और दिमाग़ को वज़ीर कहा जाता है और शाह व वज़ीर ही हैं कि उनके सिपुर्द है निज़ामे जिसमानी। तो कुदरत ने ये बताया कि देखो रिआया तो गाफ़िल हो सकती है लेकिन जो ज़िम्मेदार हैं उनके ऊपर गफ़लत तारी नहीं हुआ करती। तो दिल व दमाग़ इंसान के कभी नहीं सोते। दिल व दमाग़ काम करते रहते हैं तो अब जब आप ज़बान से लफज़ें अदा कर रहे हैं और ज़हन मुतवज्जेह ही नहीं कि क्या कह रहे हैं तो दिमाग़

तो अपना काम करेगा। दिमाग़ से आप इन लफ़्ज़ों के मतालिब की तरफ़ तवज्जो नहीं कर रहे हैं तो दिमाग़ कभी इधर जा रहा है कभी उधर जा रहा है। वो जो दरख्वास्त दी थी उसका क्या हुआ। मालूम नहीं अबकी किस तारीख़ को शकर मिलेगी। ना मालूम हमारा कार्ड किधर गया। अब सैकड़ों ख़यालात होंगे इसलिए कि दिमाग़ तो अपना काम करता ही रहेगा। जब आप इन लफ़्ज़ों पर गौर नहीं कर रहे जो अदा कर रहे हैं तो इधर–उधर के ख़यालात आयेंगे इसलिए जब हम नमाज़ शुरू करते हैं तो उससे पहले जो आयत पढ़ी जाती है वो क्या है वजहिल्लज़ी फ़ातेरूस्समावाते वलअर्ज़ हनीफा मसलमा वमा अना मिनल मुशरेकीन। ''वजहत व जही'' मैंने अपने चेहरे को यानी अपनी तवज्जो को पूरी तरह क़ायम कर दिया है। मेरी पूरी–पूरी तवज्जो है किस के लिये ''लजी फ़ातेरूस्समावाते वलअर्ज़'' मैं उसकी तरफ पूरी तरह मुतवज्जेह हूँ जिसने आसमानों को भी पैदा किया है। जिसने जमीन को भी पैदा किया है जो खालिके कायनात है। किस तरह मुतवज्जेह हूँ ''हनीफ़–ए–मुसलेमा'' हनफ़ कहते हैं मुड़ने को ''हनीफ़न'' यानी हर चीज से मैंने रूख़ को मोड़ कर उसकी तरफ़ तवज्जोह क़ायम कर दी। ''हनीफ़ा मुसलिमा'' हर चीज़ से तवज्जाहे मोड़ी और एक तरफ़ तवज्जो क़ायम की है और इसके बाद एक अजीब जुमला है ''वमाअना मिनलमुशरिकीन'' और मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो शिर्क करने वाले हैं। यानी वह शिर्क तो और है कि इबादत गैरूल्लाह की करूँ। वो शिर्क तो और है कि मैं अल्लाह के अलावा किसी को अपना खालिक़ व मालिक व राज़िक़ समझूँ। ''हनीफ़न'' मैंने अपनी पूरी तवज्जो अल्लाह की तरफ क़ायम कर दी है। मैं अपनी तवज्जो में भी किसी को शरीक नहीं करना चाहता बस मैं हूँ और मेरा अल्लाह है बस इधर ही मेरी तवज्जो है। ''इन्ना सलाती वनोसोकी व महयाया व ममाती लिल्लाहे रब्बिल आलमीन'' नमाज़ शुरू करने से पहले ये दुआ पढ़ना मुसतहब है दुआए तवज्जो।

मालूम हुआ जो अल्लाह की तरफ तवज्जो होना चाहिए वो होगी, कब? जब हम ये सोचें कि हम क्या कह रहे हैं। जब हम इस तरफ मुतवज्जे हों कि इन अलफाज़ को जो ज़बान से अदा कर रहे हैं। उसका मतलब क्या है उसकी गहराई क्या है। और जो मुतवज्जे होते थे नमाज़ की तरफ, बारगाहे इलाही में हजूर के वक़्त जिनकी तवज्जो क़ायम रहती थी और उनकी तवज्जो का आलम ये होता था कि घर में आग लग जाती थी और उनको पता ही नहीं चलता था। जनाबे इमाम मोहम्मद बाक़िर अ० नमाज़ पढ़ रहे हैं घर में आग लग गयी, नमाज़ में उसी तरह मशगूल रहे। मोहल्ले वाले दौड़े आग बुझा भी दी गयी इमाम की नमाज़ पर असर ही नहीं पड़ा। और जब नमाज़ ख़त्म हो गयी और लोगों ने कहा ''कि घर में आग लगी और आप नमाज़ पढ़ते रहे। तवज्जो ही नहीं कि''। कहाँ ''हाँ मैं जानता था कि इस आग से ज्यादा सख़्त उस आग का असर है। ये आग हल्की है। उस आग के मुक़ाबले में।''

आप जानते हैं बहुत ही मशहूर वाक़ेआ है। इमाम ज़ैनुल आबेदीन (अ०) नमाज़ पढ़ रहे हैं। और बच्चा कुंए में गिर गया और इमाम के ख़ुज़ू व खुशू और तवज्जो में फर्क़ ही नहीं आया। उसी तरह नमाज़ पढ़ते रहे। उधर माँ और माँ भी मामूली माँ नहीं है गोया क़ुदरत ने फिर बहरेन को मिला दिया है। इधर हुसैन अ० के फरज़न्द हैं अली अ० और उधर हसन अ० की दुख़्तर हैं फ़ातेमा स० अ०। जनाबे फ़ातेमा बिन्ते हुसैन अ० बड़ी बलन्द मरतबत बीबी मगर माँ का दिल है। बच्चा कुंए में गिर गया। माज़ल्लाह–माज़ल्लाह कोई ईमान में आंच नहीं। इज़्तेरारी कैफियत में इंसान के बहुत से आमाल ऐसे हैं जिनकी गिरफ़त नहीं होती कि उसके होश व हवास ही दुरूस्त

नहीं। इमाम अ० ने नमाज़ ख़त्म की। बीबी ने कहा दिल नरम ही नहीं है बच्चा गिर गया है तवज्जो ही नहीं फ़रमाई। बस ये सुन कर इमाम (अ०) मुस्कराते हुए आये हाथ बढ़ाया। इधर इमाम (अ०) का हाथ बढ़ा उधर कुंआ उबल कर बलन्द हुआ और इमाम ने हाथ बढ़ा कर बच्चे को निकाला और कहा देख तेरे बच्चे का दामन भी तर नहीं हुआ। अगर मैं उस हाफिज़ को छोड़ देता तो तेरे बच्चे की हिफाज़त कौन करता।

तो यह तवज्जो होती है कब? जब ये तसव्वुर होता है कि हम किस के सामने हाज़िर हैं और हम क्या कह रहे हैं। वो तो मशहूर वाक़ेआ आप ने सुना है कि जंग में अमीरूल मोमिनीन (अ०) के पैर में तीर चुभ गया और जब निकाला जाता है तो आप रोक देते हैं इतनी तकलीफ़। और अब रसूल सल्लाहो अलैहे वआलेहीवसल्लम ने कहा यूँ नहीं। जब अली अ० नमाज़ में मशगूल हों तो तीर निकाल लेना। अमीरूल मोमिनीन (अ०) ने नमाज़ शूरू की लोग आगे बढ़े पैर से तीर निकाल लिया। नमाज़ के बाद मुसल्ले पर खून देखा, कहा ये क्या? कहा आक़ा वो तीर निकल गया। फरमाया मुझे खबर भी न हुई कब तीर निकल गया। ये है तवज्जो का आलम। जब मुतवज्जे होता है इंसान। ताअज्जुब होगा शायद की कैसे तवज्जो हो सकती है इतनी। मगर अपने ऊपर अंदाजा कर लीजिए। मैं हर एक को तो नहीं कहता। आम लोगों में मुझ ऐसो में जिनको ज़रा उस वक्त जब कोई दिलचस्प कहानी अपने आखरी अंजाम पर हो और उसमें महो हों। अब आप देख लीजिए कि कोई पुकार रहा है तो कोई खबर नहीं। खाना ठंडा हो गया तो कोई खबर नहीं। चाय का वक्त गुजर गया तो ख़बर नहीं। अख़बार वाला अख़बार दे गया रोज़ाना पढ़ने के शौक़ीन हैं आज ख़बर नहीं। क्यों? इसलिये कि महो हैं। तो जब चीज़ में महवीयत हो जाती है तो इंसान बेख़बर हुआ ही करता है। अब ये और बात है कि किस चीज़ में महवीयत हो जाती है। और जितना ज़्यादा रब्त होगा उतना ही क़वी महवीयत होगी। उतनी ही ज्यादा बेख़बरी होगी।

इस ऐतेराज़ का कि कैसे हो सकता है कि तीर निकल जाये नमाज़ में और खबर न हो। मशहूर व मारूफ जवाब तो वही है जिसको कुरान ने पहले ही पेश कर दिया है कि जिस वक़्त जुलैखा पर ये इल्ज़ाम लगाया गया कि एक गुलाम के हुस्न व जमाल ने तुझे इतना अपने से वाबस्ता कर लिया कि अपनी इज्जत का भी ख़याल न रहा और जुलैख़ा ने ये चाहा कि ज़रा जमाले यूसुफ़ का जलवा दिखा दिया जाये तो जामा किया औरतों को और तवाज़ो के तौर पर तरंज या और कोई फल और चाकू सामने रख दिये और जनाबे यूसुफ अ० को हमेशा जिनको शाही लेबास में रखती थी आज गुलामों के लिबास में रखा। लेबासे फाखेरा अलग कर दिया आम गुलामों का लिबास पहना दिया। हाथ में तश्त व आफताबा। कहा जब मैं कहूं तो निकल आना। शाही लिबास अलग कर दिया गया था कि कहीं ये न ख़याल हो कि जेवरात की चमक दमक ने लिबास के हुस्न ने अपनी तरफ कशिश पैदा कर दी थी। लेहाज़ा हुस्ने सादा जहां कोई आराइश व ज़ेबाइश का सवाल ही नहीं। जुलैखा ने औरतों से कहा कि ज़रा तरंज काटो और यूसुफ को आने का इशारा किया तो कुरान के अल्फाज़ हैं ''फकत्ताना ऐदीहुन्ना'' बजाए तरंज काट लिये और जब तक जनाबे यूसुफ सामने रहे अहसास न हुआ कि हाथ काट गये हैं। ये कुरान ने मिसाल क्यों पेश किया कि देखो जब महवीयत जमाल होती है तो एहसासे दर्द ख़त्म हो जाता है तो अगर जमाल नाक़िस में इतनी कशिश हो सकती है तो जमाले हक़ीकी किसी के सामने जाहिर हो जाये और तीर निकल जाये तो हैरत क्यों हैं? बहरहाल कल मैंने अर्ज किया कि सूर–ए–हम्द की इब्तेदा अलहम्दो लिल्लहे रब्बिल आलमीन से नहीं है। बल्कि सूर–ए–हम्द की इब्तेदा है बिमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम से। और इस सिलसिले में कल मैंने अर्ज़ किया था आप की

खिदमत में कि ये मसअला अगरचे बज़ाहिर मुसलमानों में ऐख़्तेलाफी है कि बिसमिल्लाह सूरों का जुज़ है या नहीं। बिसमिल्लाह अलग से है या जुज़्वे सूरा है। मुसलमानों में ये मसअला एख़्तेलाफ़ी है। लेकिन शियों का इजमाअ है इस पर कोई ऐखतेलाफ़ी ही नहीं शिओं में चाहे किसी मुजतहिद के मानने वाले हों किसी मुजतहिद की तकलीद में हों हर एक का इस पर इत्तेफाक़ है कि बिसमिल्लाह सूरे का जुज़ है।

एक मसअला भी मैं आप की खिदमत में अर्ज़ कर दूँ उसकी तरफ़ आप तवज्जो रखेंगे सूरए हम्द पढ़ने के बाद पहले मैंने बिमिल्लाहिर्रमानिर्रहीम कहा। अब दूसरा सूरा मैं शुरू करने वाला हूँ अगर मेरी आदत है मोअय्यन कि हमेशा पहली रकअत में, मैं ''इन्ना अनज़लनाहो'' ही पढ़ता हूँ या ''इन्ना आतैना'' ही पढ़ता हूँ। दूसरी रकअत में ''कलुहवुल्लाहो'' ही पढ़ता हूं ये आदत मोअय्यन है तो अगर ज़हन मुतवज्जे न भी रहे कि बिसमिल्लाह किस सूरे के लिए कह रहा हूँ तो ये आदत मुअय्यन कर देगी कि इसी सूरे का जुज़ है कि जिसको मैं पढ़ता रहता हूँ। लेकिन अगर मुअय्यना आदत नहीं है कभी मैं ''इन्ना आतैना'' पढ़ लेता हूँ कभी मैं ''या अय्योहलकाफिरून'' पढ़ लेता हूं तो जरूरत है कि सूरए हम्द के बाद पहले ज़हन को मुअय्यन कर लें कि कौन सा सूरा पढ़ेगा। तब बिसमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम कहे। क्योंकि ''बिसमिल्लाह'' उसी सूरे का जुज़ क़रार पायेगी जिसकी नीयत से पढ़ी जा रही है। तो इस तरफ मैंने इसलिए मुतवज्जे किया ताकि जब आप पढ़ने लगें तो इस मसले की तरफ तवज्जो रखें कि जब ''बिसमिल्लाह'' कहना चाहें तो पहले मोअय्यन कर लें कि कौन सा सूरा पढ़ना चाह रहा हूँ और किस सूरे की नीयत से मैं बिसमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम कह रहा हूँ।

तो शियों का तो इजमाअ है मगर अहले सुन्नत हज़रात ये कह दिया करते हैं कि बिसमिल्लाह सूरे का जुज़ नहीं है लेहाज़ा शुरू कर देते हैं बग़ैर ''बिसमिल्लाह'' कहे हुए। लकिन उनके यहाँ भी मोअतबर तरीन रवायत, सेहाह की मोतबर तरीन रवायत यही है कि बिसमिल्लाह जुज़्वे सूरा है। और मैं अपने बिरादराने अहले सुन्नत को मुतवज्जे करना चाहता हूँ कि कोई भी मुजतहिद उनके यहाँ का ये नहीं कहता कि अगर किसी सूरे के पहले बिसमिल्लाहिरर्हमानिर्रहीम कह लोगे तो नमाज़ बातिल है। किसी का भी यह फ़तवा नहीं है कि नमाज़ टूट जायेगी। और ख़त्म हो जायेगी और बातिल हो जायेगी। लेकिन इन रिवायात की बुनियाद पर जिनकी तरफ़ इशारा किया सूरे का जुज़ है ''बिसमिल्लाह'' लेहाज़ा अगर न कहा तो सूरा नाक़िस हो जायेगा और नमाज़ बातिल। एहतियात का तक़ाज़ा तो यही है कि आप भी जब कभी सूरा शुरू करना चाहें तो पहले बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम कह लिया करें। ये न सोचें कि शियों से मुशाबहत हो जायेगी। तक़ाज़ाए एहतियात यही है। क्योंकि एक तरह सूरे के नाकिस होने का इमकान है और दूसरी तरफ कोई असर नहीं पड़ता। और मैंने कल आप से अर्ज किया कि जनाब अनस,जनाब अब्बास, जनाब अब्दुल्लाह बिन अब्बास यहाँ तक कि अब जनाबे अब्दुल्लाह बिन उमर से मुतादिद रावियों ने ये रवायत की है कि बिसमिल्लाह जुज़्वे सूरा है। उसमें यहाँ तक है जो मैं कल अर्ज कर चुका कि जब तक बिसमिल्लाह नाज़िल न होती थी हमें पता न चलता था कि दूसरा सूरा शुरू हो रहा है। तो दूसरा शुरू होने का पता चलता था बिसमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम से। और इस सिलसिले में रिवायात को जमा कर दिया गया है मोतबर किताब ''अलएतकाद फी तफसीर कुरान'' में। इसमें आप मुलाहज़ा फरमा लें कि हवालों के साथ सेहाह के उन रवायत को जमा कर दिया गया है और सिर्फ दो रवायतें लिखी हैं जिसमें पता चलता है कि बिसमिल्लाह जुज़ नहीं है इसमें ये है कि मैंने फलां–फलां के साथ नमाज़ पढ़ी मगर मैंने तो कभी बिसमिल्लाह नहीं सुनी। ये नहीं कहा कि ''नहीं कही''। ये कहा ''

नहीं सुनी''। तो न सुनने में ये भी हो सकता है कि गरां गोश हों। न सुनने में ये भी हो सकता है कि फासले पर रह गये हों पीछे आवाज़ न आती हो। बहर सूरत ज्यादा मोतबर और ज्यादा तादाद में रिवायत वही हैं कि जो बिसमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम को जुज़ सूरा बताती है।

मैं इंसाफ तलब करता हूँ। शियों पर बड़ा सख़्त इलज़ाम यह है कि ये कुरान में तहरीफ़ के कायल हैं यानी कुरआन में आयतें या कम हो गयी हैं या ज्यादा हो गयी हैं और अभी किताब छपी है एक, उसमें शियों के काफ़िर होने की सबसे बड़ी दलील इसी तहरीफ़ के अक़ीदे को क़रार दिया गया है और मैं इस पूरे मजमें में पूरी ज़िम्मेदारी से एलान करता हूँ कि ये इलज़ाम है ये गलत है, खुली हुयी तोहमत है शिओं पर। शिआ हरगिज़ तहरीफ़ के क़ायल नहीं। शिआ इसी कुरआन को जो आप पढ़ते हैं अपना कुरान समझते हैं और उसके हर लफ़्ज़ को अल्लाह का कलाम मानते हैं, उसके हर जुमले को अल्लाह का कलाम मानते हैं और उलमाए शिआ ने तशरीह की है। इस वक्त भी जो आलम है तमाम शिओं के नज़दीक, आयतुल्लाह ख़ुई कि जिनकी तक़लीद में तक़्रीबन पूरा हिन्दुस्तान है। उनकी किताब ''अलबयान फ़ी तफसीरे कुरआन'' मौजूद है जिसमें उन्होंने ने कम से कम साठ सत्तर सफ़हे ख़ाली तहरीफ़ की रद में लिखे हैं। रिवायतों की बिना पर अगर आप कहते हैं मैं दावे से कहता हूँ कि हमारे यहाँ की रिवायतों से ज़्यादा आप के यहाँ की रिवायतें मौजूद हैं। अगर आप को देखना हो तो एक मुख़्तसर किताब जो उनकी रद में छपी है, ''फ़ित्नए वहाबियत'' उस में भी इस बहस को नक़्ल कर दिया गया है उसमें पूरी तफसील बयान कर दी गयी है मगर मैं ज़िम्मेदारी से कहता हूँ कि शिआ तहरीफ के हरगिज़ क़ायल नहीं अपने अक़ीदे को मैं बयान करूँगा आप को हक़ नहीं है बयान करने का। दूसरे यह नहीं कह सकते कि तुम्हारा अक़ीदा क्या है। मैं खुद बताऊंगा कि मेरा अक़ीदा क्या है। आज न तक़इये का महल है कि आप कहें छुपा रहे हैं न तौरिए की गुंजाइश है कि आप कहें बात बना रहे हैं अगर तक़इया और तौरीया करना होता तो पहले हम उन चीज़ों का इंकार कर देते जो आप के लिए तकलीफ़देह है, मगर हम उनका इनकार नहीं कर रहे हैं तकइय्ये का महल नहीं। हम बाऐलान अपने अक़ाएद को बयान कर रहे हैं तो हम ऐलान कर रहे हैं हम तहरीफ़ के क़ायल नहीं मगर बस छोटा सा आप से सवाल है कि बेचारे शिआ तो इस इल्ज़ाम और तोहमत की बिना पर कि वह तहरीफ़ के क़ायल हैं काफ़िर हो जायें लेकिन ज़रा आप इतना बता दीजिए कि बिसमिल्लाह सूरों का जुज़्व है या नहीं है? अगर बिसमिल्लाह सूरों का जुज़्व नहीं तो आपने ये एक सौ तेरह आयतें कुरआन में बढ़ा क्यों दीं? ये हर सूरे से पहले आप ने बिसमिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम लिखी तो एक सौ तेरह आयतें बढ़ गयीं और अगर बिसमिल्लाह सूरे का जुज़्व है तो आपने उसको कम करके पढ़ा तो इस तरह कमी कर दी तो या कहिए कि कमी के क़ायल या कहिए कि ज़्यादती के क़ायल। एक बात कही जाती है कि नहीं आप लोग समझते नहीं बिला वजह ख़फ़ा होते हैं। ज़रा गौर कीजिए कि हमने बिसमिल्लाह जो लिखी है किसी मक़सद के मातहत लिखी है कुरान में इज़ाफा नहीं किया है। बल्कि क्योंकर ये मालूम हो कि एक सूरा ख़त्म हो गया है दूसरा शुरू हो गया है बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम लिख दी है यह दूसरा शुरू हो रहा है सूरए बक़रः तो यह सिर्फ फासला बताने के लिये बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम लिखी है। ठीक है जो`आप कहें मैंने कहा न! आप को अपनी बात कहने का हक़ है मैं आपकी तरजुमानी क्यों करूँ। ठीक है बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम लिखी जाती है फासला बताने के लिये। जहाँ एक सूरा ख़त्म होता है दूसरा शुरू होता है बीच में फ़स्ल के लिए बिस्मिल्लाह ले आते हैं तो कहाँ होना चाहिए जहाँ एक सूरा ख़त्म हो दूसरा शुरू हो लेकिन

जिससे पहले कोई सूरा ख़त्म नहीं हुआ फिर वहाँ तो बिस्मिल्लाह नहीं लिखना चाहिए। सूरए हम्द से पहले बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम क्यों है और जब जुज़ नहीं है तो असर पड़ेगा नहीं। खाली फासले ही के लिए तो है सूरए बरात के शुरू में आपने बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम क्यों नहीं लिखी तो सूरए हम्द के पहले लिखना सूरए बराअत के पहले न लिखना दलील है कि बिस्मिल्लाह जुज़्व था जहाँ था वहाँ लिखा जहाँ नहीं था वहाँ नहीं लिखा।

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम शुरू करता हूँ मैं उसके सहारे से उसकी मदद से जो रहमान भी है और रहीम भी और कल मैंने अर्ज़ किया ये नहीं कहा कि अल्लाह के सहारे शुरू कर रहा हूँ। ये नहीं कहा कि अल्लाह से मदद माँग रहा हूँ। इरशाद हुआ बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम। अल्लाह के नाम से मदद माँग रहा हूँ। अल्लाह के नाम का सहारा ले रहा हूँ और नाम होता है ज़ात से अलग। ज़ात अलग होती है नाम अलग। नाम सिर्फ़ अलामत है नाम सिर्फ़ पहचान है नाम के ज़रिए से शख़्स मोअय्यन होता है। इसी लिए नाम बदल जाता है शख़्सियत नहीं बदलती। तो नाम है ज़ात से अलग और कुरान में एक सौ चौदह जगह सूरए सबा की आयत को मिलाकर। सूरए सबा में भी बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम आया है। यूं तो सूरए सबा में भी बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम आया है। यूँ तो सूरे हैं एक सौ चौदह और बिस्मिल्लाह सूरों से पहले है एक सौ तेरह मरतबा क्योंकि सूर–ए–बराअत से पहले नहीं है। लेकिन मैं तो कल भी अर्ज़ कर चुका हूँ कि ये भी अहमियते बिस्मिल्लाह की दलील है कि कुदरत ने ये न चाहा कि तादाद कम हो लेहाज़ा अगर एक सौ तेरह मरतबा बिस्मिल्लाह सूरों से पहले आई थी और एक सूरे के पहले न थी तो सूरए सबा के ज़िम्न में एक मरतबा फिर बिस्मिल्लाह का तज़केरा कर दिया गया इन्नहू मिन सुलैमाना व इन्नहू बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम। ताकि जितनी तादाद सूरों की है उतनी ही तादाद बिस्मिल्लाह की भी हो जाये। बिस्मिल्लाह की तादाद सूरों की तादाद से कम न रहने पाये।

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम एक सौ चौदह मरतबा कुरान मजीद में ये आयत नाज़िल हुई जिस तादाद में कोई आयत नाज़िल नहीं हुई। क्या कहा जा रहा है? उसके नाम के सहारे से जो रहमान व रहीम है। मैं कहता हूं कि नाम का सहारा कैसा? अल्लाह का सहारा लो ''नाम'' अल्लाह थोड़ी है। वरना अल्लाह के जितने नाम थे उतने अल्लाह होते। कि जब तुम अल्लाह के साथ उसको रब कहते तो दो अल्लाह हो जाते और जब तुम रहीम कहते तो तीन अल्लाह हो जाते और जब रहमान कहते तो चार अल्लाह हो जाते। नहीं नाम अलग है ज़ात अलग। और तुम कहते हो सहारा ले रहा हुँ अल्लाह के नाम का तो जब तुमने कुरआन की इब्तेदा की तो वहीं से पता चल गया कि देखो अल्लाह तक बगैर किसी वसीले के नहीं पहुंच सकते पहले उन तक पहुंचो जिनसे अल्लाह को पहचानोगे चाहे वह अल्फाज़ में हो चाहे हक़ीक़तन हो जिनके ज़रिए मारिफते इलाही होती है। बस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम उस अल्लाह के नाम से जो रहमान भी है और जो रहीम भी है और सब समेट के वो अमीरूलमोमिनीन की मशहूर व मारूफ हदीस कि आपने फरमाया कि जो कुछ कुरआन में है वो सूरए हम्द में और जो कुछ सूरए हम्द में है वह सब समेट के आया बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम में और बाए बिस्मिल्लाह जो मुखतसर हुआ तो नुकतए बा बना और अब फरमाते हैं कि अना नुक़ततो तहतल बा यानी आम लफ़ज़ में अलफाज़ की दुनिया में। जो हैसियत कुरआान की है मौजूदात वऐयान की दुनिया में वही हैसियत इस्मत के सिलसिले की है और सिलसिल–ए–कुरआन के ऐखतेसार में जो हैसियत बाए बिस्मिल्लाह की है सिलसिल–ए–इस्मत में वही हैसियत मेरे भाई ख़ातिमुन्नबीईन की है और जिस तरह मारेफते ''बा'' नुक़्ते पर मौकूफ उसी तरह रसूल (स०) को पहचानना है तो मुझ तक आओ मैं हूँ ज़रिअए मारेफ़त। सुन

लें आप ये यूं ही नहीं कह रहा हूँ इल्मे आदाद जानने वालों ने ये कहा कि अबजद में अलिफ से इशारा है ज़ाते इलाही की तरफ वो वाहिद व यकता है वो अकेला है उसका कोई शरीक नहीं इशारा ज़ाते इलाही की तरफ अलिफ से किया जाता है। अलिफ भी कौन कि जिसका अदद ''एक''। दूसरे हरूफ को जब मिला कर लिखोगे तो उनकी शक्लें बदल जायेंगी।

जब तुमने ''जब'' लिखा मिला कर जीम को ''बे'' से तो जो शक्ल अलग जीम की थी वो और अब जब तुम मिला दोगे शक्ल दूसरी होगी। हर लफ़ज़ को तुम देख लो कि जब दूसरे में मिलाई जायेगी तो अपनी शक्ल को खो देगी लेकिन जब अलिफ मिलाओगे तो उसकी हैसियत में फ़र्क़ नहीं आयेगा। वो तग़य्युर व तबद्दुल से बरी रहेगा। उसमें कोई तबदीली नहीं होगी। तो अलिफ से इशारा ज़ाते इलाही की तरफ और अलिफ के बाद जब दूसरी मंजिल है ''बे'' कि अव्वल मख्लूक़ ज़ाते इलाही के बाद कौन दूसरा मौजूद, कौन कायनात में दूसरा मौजूद। एक तो है मौजूदे अज़ली दूसरा मौजूद कौन जिसने ऐलान किया ''अव्वलो मा ख़लक़ल्लाहो–नूरी'' सबसे पहला नूर जिसको अल्लाह ने पैदा किया वो मैं हूँ तो जब नूरे रेसालत पैदा हुआ तो एक था पैदा करने वाला और एक था पैदा होने वाला ये है दूसरी मख़लूक़ तो इशारा ''अलिफ''से अल्लाह की तरफ़ और ''बे'' से उसकी तरफ़ जो दूसरा वजूद रखता है जिसने कहा सबसे पहला मख़लूक़ मैं हूँ ख़ालिक़ के बाद मेरा ही वजूद, तो ये हैसियत किसको हासिल? जो अलिफ के बाद आ जाये, तो वो मंजिल है बे की। बे वह है कि जो दूसरा मौजूद है। यानी तकलीफ़े कायनात में ख़ालिक़ के बाद जो मंज़िल है वो रसूल स० की। और अबजद में इशारा जो अल्लाह की तरफ़ करने वाला अलिफ़ अलिफ़ जिस के बाद हर्फ़ है, ''बे'' लेकिन मैंने बे लिख दिया पूरा खींच दिया यहां से वहां तक और मैंने आप से पूछा कि ये क्या है कहा अजी मालूम नहीं क्या है? क्यों नहीं मालूम कहा एक नुक़्ता दीजिए बे हो जाये दो ऊपर नुकते दीजिएगा ते हो जायेगा तीन नुकते नीचे दिजीएगा पे हो जायेगा तीन ऊपर नुकते दीजिएगा से हो जायेगा अभी पहले नुकते तो दीजिए तो पहचानुंगा कि क्या है। मालूम हुआ कि बे मारेफत नहीं उस वक़्त तक जब तक नुकता न आ जाये। फ़रमाते हैं अना नुक़ततो तहतल बा मैं हूँ ज़री–य–ए–मारेफ़ते रसूल स० अ० मेरे ज़रिए से रसूल स० अ० को पहचानो। ज़री–य–ए–मारेफ़त रसूल स० अ० मेरी ज़ात है। मुझ से पहचानो कि वसी ऐसा है तो नबी कैसा होगा मुझ से पहचानो कि शागिर्द ऐसा है तो उस्ताद कैसा होगा मुझ से पहचानो कि जुज़्वे नूर ऐसा है तो कुल्ले नूर कैसा होगा।

ज़रा आप तवज्जो फ़रमायें जिस वक़्त मैंने उलमाए ख़त से पूछा कि इन ख़तूत कि इब्तेदा कैसे हुई तो उलमा ने बताया और पूरी किताबें लिखी गयीं हैं। बताया अस्ल खत था इब्तेदा में तस्वीर की शक्ल में पहले हुरूफ न थे मतालिब समझाने के लिये इब्तेदाअन तस्वीर तस्वीर बना दी जाती थी वही तस्वीर बढ़ते–बढ़ते हुरूफ़ की शक्ल में आ गयी मसलन जमल कहते हैं ऊंट को। ऊंट की गर्दन और वो उसका मुड़ा हुआ सर वो उसकी बैठने की शान, एक तस्वीर बना दी गयी। अब उसके बाद शक्ल बदलते–बदलते जीम की शक्ल आ गयी। शजर बनाना था दरख्त जिसमें तीन शाखें हैं जिसमें कुछ पत्ते हैं वो शक्ल शजर की बनाई गयी बाद में वो घटते–घटते''शीन'' बन गयी। अब मुझे पूरी तफसील तो अर्ज करना नहीं उलमा ने बयान की है हर लफ़्ज की इब्तेदा तो उसमें ''बे'' की इब्तेदा क्या लिखी है कि अस्ल में जब इशारा करना होता था बैत की तरफ यानी घर की तरफ तो बे की शक्ल बना दी जाती थी इधर दीवार उधर दीवार इशारा कर रहा है कि मैं घर जा रहा हूं। बाद में वही शक्ल बोलते–बोलते ''बे'' बन गयी। मगर मैं ये पूछता हूं कि ''बे'' तो बैत है ये नुकता कहां से आया बता तो दो मुझे तो उलमा ने

बताया कि बैत में बाब भी होता है तो दरवाजे की तरफ इशारा नुकते से किया गया है तो अली अ० ने कहा अना नुकततो तहतल बा रसूल स० अ० के मदीनए इल्म का बाब कौन वो मैं ही तो हूँ। लेहाज़ा जिस तरह नुकता बाब को बतलाता है मैं भी बताता हूँ कि मदीनए रसूल का बाब मैं हूँ मुझ से रसूल स० अ० तक पहुंच सकते हो। अना मदीनतुल इल्मे व अलीयुन बाबुहा मैं शहरे इल्म हूँ अली अ० उसका दरवाज़ा मन बाबुहा मैं हिकमत का घर हूँ और अली अ० उसका दरवाज़ा मन अरादल इल्मा फिल या तिल बाब जिसको इल्म के शहर की आरजू हो वो दरवाज़े तक आये।

आज भी मुसलमानों के लिए इस हिन्दुस्तान में इल्म हासिल करने का अगर कोई मरकज़ बनाया गया उसके बानियों में कुछ शिया भी शामिल थे मगर जब अस्ल बानी का नाम लिया जाता है तो हज़राते अहले सुन्नत फख़्र करते हैं कि हम में से हैं लेकिन जब वहां भी मस्जिद बनाया गया तो वहाँ जो हदीस मुंतख़ब की गयी तो वो यही थी आज भी लिखी हुई है। आपको अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी की मस्जिद के दरवाज़े पर आज भी यही हदीस मिलेगी अना मदीनतुल इल्म व अलीयुन बाबुहा अगर रसूल (स० अ०) तक आना है तो दरवाज़े से आओ। रसूल (स० अ०) तक आने का ज़रीआ हैं अली अ० अना मदीनतुल इल्म मैं हूँ इल्म का मदीना, इल्म का शहर व अली बाबुहा और अली अ० उसका दरवाज़ा है मन अरादल इल्म फलायातिल बाब। अजीब लफ़्ज़ है " मन अरादल इल्म"। अल इल्म"। अलइल्म जिसको सही इल्म लेना है जिसको सच्चा इल्म लेना है जिसको इल्म कहा जाता है "फलायातिल बाब" वो मेरे दरवाज़े पर आये और कितनी सच्ची हदीस थी रसूल स० की कि आज भी दुनिया का इक़रार है जो इंसाफ पसन्द है, जो मुंसिफ मिजाज़ है उनको आज भी इक़रार है कि चाहे हुकूमत या सलतनत किसी तरफ चली गयी हो। लेकिन विरासते इल्मी रसूल स० की ख़ानदाने रेसालत की तरफ़ रही और इसका सूबूत भी हैकि जितने उलूम इस्लाम में फैले वो सब जाकर मुनतही हो जाते हैं अली अ० और औलादे रसूल अली अ० पर। उलूम की जाकर इंतेहा हो जाती है जाते अली अ० पर या औलादे अली पर। इसी तरह निस्बत जाकर ख़त्म होती है चाहे वो इल्मे तफ़सीर हो चाहे वो इल्मे कलाम हो चाहे वो इल्मे हदीस हो। और लोग जब नहजुल बलाग़ा को पढ़ते हैं तो मुतहय्यर रह जाते हैं कि उस दौर में ऐसे उलूम के धारे, यहाँ तक कि बाज़ हैरत ज़दा लोगों ने इंकार ही कर दिया कि ये अली अ० का कलाम ही नहीं हो सकता। क्यों नहीं हो सकता इसलिए कि उसमें तो वो चीजें पाई जाती हैं कि जहाँ तक उस वक़्त का ज़हन पहुँचा ही नहीं सकता था इसीलिए तो मैंने कहा कि हैरतज़दा लोग अरे जो न समझ सके कि दुनियावी उलूम रफ़्ता–रफ़्ता तरक्की करते हैं और वहबी उलूम में रफ़्ता रफ़्ता नहीं होता वो तो इलाही उलूम हैं जो बिला वास्ते आते हैं। आज भी नहजुलबलाग़ा की तिलावत कीजिए और उसको पढ़िए तो पता चले कि किस तरह सिमट कर उलूम आगये और सिर्फ एक ज़ात नहीं बल्कि पूरा सिलसिला वही। ये तो अली अ० हैं कि जिनके अलावा किसी ने कभी दावा ही नहीं किया "सलूनी कब्ला अन तफ़केदूनी" जो पूछना है मुझ से पूछो क़ब्ल इसके कि मुझ को न पाओ। और ये मैं आपके सामने कई मरतबा अर्ज कर चुका हूं लेकिन ज़िम्ने कलाम में फिर अर्ज़ कर दूं कि और किसी का तज़किरा नहीं मेरी क़ासिर निगाह में कभी रसूल स० की ज़बान से भी ये दावा नहीं मिला। ख़ातेमुन नबीईन स० और सय्यद अमीरूलमोनिन अ० का मुझे किसी मंजिल में कभी यह जुमला मेरी नज़र से नहीं गुज़रा कि आपने फरमाया कि "सलूनी क़ब्ला अनतफकेदूनी" जो पूछना हो मुझ से पूछो कब्ल इसके कि मुझे न पाओ। ये खुसूसीयत एक अ० की ज़ात में है। तो क्या मैं गुलू कर रहा हूँ तो क्या मैं मुबालग़ा कर रहा हूँ तो क्या इसका मतलब ये है कि मैं शागिर्द को उस्ताद पर

फ़ज़ीलत दे रहा हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि जो दावा नबी (स०) ने नहीं किया वो अली (अ०) ने कैसे कर दिया। मगर जो मेरी समझ में तौज़ीह आती है वो अर्ज़ करता हूँ मुमकिन है और उलमा इससे बेहतर तौज़ीह पेश कर सकें। मेरी समझ में जो तौज़ीह आती है वो यही है कि अली (अ०) को कहना चाहिए था और नबी (स०) मदीनतुल इल्म थे उलूमे अव्वलीन व आख़रीने रसूल (स०) को हासिल थे। कुरआन का नुजूल रफ़्ता–रफ़्ता हुआ है इसलिए कि पढ़ते जाओ। पूरे कुरआन का तो नुजूल तो पहली शबे कद्र में कल्बे रेसालत पर हो चुका था। उलूम पूरे ज़खीरे थे कल्बे रेसालत में, लेकिन फिर भी मुझे ये तारीख़ की नाकाबिले इंकार हकीकतें मिलती हैं कि सवाल किये जा रहे हैं रसूल (स०) से। पूछने वाले ने पूछा रसूल (स०) से और रसूल (स०) खामोश हैं। कई–कई दिन गुज़र गये। जुलकरनैन का वाक़ेआ। कहा यहूदियों ने कि उन पर वही आती है तो ख़ुदा से पूछें जुलक़रनैन का कौन सा वाक़ेआ है ज़रा बयान कर दें इसलिए कि और सब तो वाक़ेए मशहूर हैं, जुलकरनैन का वाक़ेआ इतना मशहूर नहीं है हम जानते हैं मालूम हो जायेगा कि वही आती है या नहीं। सवाल किया कई दिन गुजर गये और उसके बाद आयतें उतरना शुरू हो गयीं। तो ये क्यों खामोश? क्या जानते न थे। जानते थे मगर चूंकि लक़ब था अमीन और अमीन का तक़ाज़ा है कि अमानत को बगैर इजाज़त फर्क़ न करे। तेरे दिये हुए उलूम हैं जब तक तू इजाज़त न देगा तो मुंतजिरे इजाज़त रहते थे रसूल (स०) अमानत के तक़ाज़े की बिना पर। तो अगर कहते "सलूनी" पूछ लो और कोई सवाल करता और मशीयते इलाही जवाब की न होती तो रसूल (स०)को खामोश रह जाना पड़ता, कोई शुब्हा पैदा हो जाता दिलों में। लेहाज़ा रसूल (स०) ने दावा न किया और अगर अली (अ०) भी चुप रह कर बाद में जवाब देते तो लोगों को धोखा होता कि मालूम होता है कि ये भी वही के मुंतजिर रहते हैं। मालूम होता है कि यहाँ भी वही के मुंतजिर रहते हैं। मालूम होता है कि यहा भी सिलसिले वही जारी है। लेहाज़ा नबी स० खामोश अली अ० ने फ़ौरन जवाब दिया कि अब वही का सिलसिले तो मुंक़ता हो चुका जो कुछ उलूम थे नबी स० नबी स० वो मेरे सिपुर्द करके इजाज़त दे चुके हैं। "सलूनी क़ब्ला अनतफकेदूनी" पुछते जाओ। मै जवाब देता चला जाऊंगा वो तो ज़खीरा मेरे सिपुर्द ही कर गये हैं। हाज़ा मा ज़क्क़ेनी रसूलुल्लाह। जो कुछ है सब उनका भराया हुआ है ये जो कुछ है सब उधर का दिया हुआ है। जो मैं तुम तक पहुँचा रहा हूँ हाज़ा मा ज़क़्केनी। तो ये उलूम की विरासत है। बाबे मदीनतुल इल्म। अली (अ०) वो जो बाबे मदीन–ए–इल्म हैं।

मैं सच कहता हूँ कि कैसी–कैसी लोग तावीलें करते हैं। समझ में नहीं आता कि हदीस इतनी मुसल्लम कि अब इंकार मुमकिन ही नहीं। रसूल स० का इरशाद अली अ० दरवाजा हैं कह दिया ठीक है। हम कब इंकार करते हैं। लेकिन हाँ मआनी नहीं समझते। यहाँ पर "अलीयुन बाबोहा" से ये मुराद थोड़ी है कि कोई अली (अ०) हैं जो उसका दरवाज़ा हैं। बल्कि मतलब ये है कि मैं हूँ मदीन–ए–इल्म और इस शहर का दरवाज़ा बहुत ऊंचा है। बहुत बलन्द है। मगर सवाल ये है कि जब बलन्द है तो मैं पहुचूँ क्योंकर। आप तो फ़रमा रहे हैं फलयातिल बाब अगर इल्म लेना है तो दरवाज़े पर आओ। अगर दरवाज़ा बड़ा ऊँचा है तो मैं उचक–उचक कर रह जाऊँगा पहुँच ही न सकूँगा लेहाज़ा ऐसा होना चाहिए जो मेरी रसाई की हद में हो। जिसकी बारगाह तक मैं पहुँच सकूँ और जिसके ज़रीए से मैं इल्म ले सकूँ। शायद यही तौज़ीह तो थी कि जिसकी बिना पर ग़दीर के मौक़े के ऊपर ख़ाली यह न कह दिया। नाम लेकर कहा "अली (अ०) मौला" कहीं यह न कह दें कि वो मौला बहुत ऊँचा है। मैं मौला हूँ और मैं बहुत ऊँचा हूँ। लेहाज़ा पहले हाथों पर बलन्द किया फिर इशारा किया कि " हाज़ा अलीयुन मौला"

ये हैं वो अली (अ०) जो मौला हैं। तो इल्म का जख़ीरा अगर लेना है तो दरे अहलेबैत (अ०) पर आना है और विरासते इल्मे रेसालत मुन्हसिरे अहलेबैत (अ०) हैं। यहीं से तुम्हें वो मिलेगा जो अल्लाह ने पहुंचाना चाहा। अली (अ०) के बाद हसन (अ०) हसन के बाद हुसैन (अ०)। हुसैन (अ०) हुसैन के बाद ज़ैनुलआबिदीन (अ०) मुहम्मद बाक़िर (अ०)। जाफ़रे सादिक़ (अ०)। मूसिये काज़िम (अ०) अली रजा़ (अ०) मुहम्मद तक़ी जवाद (अ०) यही वो लोग हैं कि जिन के ज़रिये तुम्हे इस्लाम की हक़ीक़त मालूम होगी। दीन की सही तस्वीर उन्हीं के दरवाज़े से तुम्हें हासिल होगी। उन्हीं के ज़रिए से तुम समझ सकोगे कि इस्लाम क्या है और उसके लिए इन हज़रात ने बड़ी मेहनतें भी कीं। जितनी कुर्बानियाँ दीं सल्तनत बचाने के लिए नहीं दी जितनी कुर्बानियाँ हैं वो सब दीन बचाने के लिए हैं। दीन की हक़ीक़तें बचाने के लिये हैं। दीन की शक्ल न मस्ख होने पाये दीन की सूरत न बदलने पाये। लेहाज़ा हर कुरबनी के लिये तैय्यार। और सबसे पहली कुरबानी, बहुत बड़ी कुरबानी थी वो मेरे और आप के लिये न सही हुसैन अ० के लिये वो बहुत बड़ी कुरबानी थी। कोई मामूली कुरबानी न थी। अगर आप को देखना हो कि ये कुरबानी कितनी अहम थी ज़रा उस वक्त देखिए जब रसूल (स०) चले हैं मक्के से जानते थे कि पलट कर आऊँगा खुद कुरआन ने तस्दीक़ कर दी थी लरद्दोका इलामआदक मैं फिर पलटा के लाऊँगा बता दिया था कि फ़ातेह की हैसियत से पलटेंगे सिर्फ़ थोड़ी मुद्दत की जुदाई है मगर जब रसूल मक्का छोड़ रहे हैं तो आमल क्या है? कि मुड़–मुड़ कर देखते जाते हैं, कहते जाते हैं ऐ मेरे मकान ऐ मेरे मकान। अगर मुझे लोग रहने देते तो मैं तुझे कभी छोड़ता नहीं मुड़–मुड़ के देखते जाते हैं। यहाँ तक कि जब तक मक्के में रहे हैं क़िब्ला बैतुलमोकद्दस लेकिन जब मदीने में पहुँचे तो हुक्म दे दिया गया कि अब काबे की तरफ़ सजदा किया करो और किब्ला काअबा हो गया क्यों? मैंने तुम्हारे दिल कि तमन्ना दे दी मालूम होता है कि दिल की तमन्ना यह हैं नमाज़ में भी अपने वतन की तरफ़ रूख हो। वतन के लेहाज़ से नहीं बल्कि अहमियत के लेहाज़ से मगर काअबा छोड़ने का तो रंज है ही। मैं कहता हूँ खुदा के रसूल (स०) आप का वतन थोड़ी मुद्दत के लिये छुट रहा था। अल्लाह ने तस्कीन भी दे दी थी कि पलट कर आना है फ़ातेह बन कर पलटना है फिर आपका ये आलम! अब ज़रा अपने नवासे की हालत देखिए जो मदीना छोड़ रहा है और इस नीयत के साथ कि अब कभी यहाँ पलट कर आना नहीं है। जानते हैं कि वतन हमेशा के लिये छुट रहा है अब कभी मदीना पलट कर आना नहीं है मैं सच अर्ज़ करता हूँ कि दोस्तादाराने अहलेबैत! आप को अल्लाह तौफ़ीक अता फ़रमाए खास तौर पर उन लोगों को जिनको इस्तेतात हासिल है तौफ़ीक़ अता फरमाये कि वो हज के लिये जायें हर हाजी जब हज कर लेता है तो मदीने भी आता है और मदीना आने के बाद उसके दिल में तमन्ना होती है कि रौजए रसूल (स०) पर भी जाये और जब रौज़–ए–रसूल (स०) पर पहुँच जाता है तो जज़्बात का क्या आलम होता है। दिल नहीं चाहता कि कब्रे रसूल (स०) से जुदा हो जाये दिल नहीं चाहता कि ये नूरानी माहौल छुट जाये। अब हुसैन (अ०) की उस अज़ीम कुरबानी का अंदाज़ा किजिए जो मदीन–ए–मुनव्वरा को इस्लाम की ख़ातिर छोड़ करके पेश की थी। मदीना छुटने से पहले इमाम हुसैन (अ०) की बेचैनी का जो आलम था उससे मदीना छुटने के बेपनाह ग़म का कुछ अंदाजा हो जाता है। रिवायतें बताती हैं कि कभी नाना (स०) के रौज़े पर पहुँचते थे और फ़रयाद करते थे कि ऐ नाना (स०) दिल की तमन्ना तो यही थी कि हमेशा आप की क़ब्र कि मुजावरी करता लेकिन आप की उम्मत मदीने में रहने नहीं दे रही है। कभी माँ कि कब्र से पलट कर रोते थे और कभी भाई हसन (अ०) की क़ब्र पर पहँचते थे। जिस शब की सुब्ह को रवानगी थी हुसैन (अ०) ने वो

शब अजब बेचैनी के आलम में गुज़ारी तमाम क़ब्रों से रूखसत हो कर घर तशरीफ लाये थे। थोड़ी देर घर में रहने के बाद फिर तड़प कर क़ब्रों पर पहुँच जाते थे। ''ऐ नाना (स०) आप के मज़ार को कैसे छोडूँ लेकिन क्या करूँ मजबूर कर दिया गया हूँ।''

जाने की तैयारी हो रही है, लोग समझाने भी आ रहे हैं, कभी मोहम्मद हनफ़िया आते हैं मशवेरा देते हैं, ऐ आक़ा! जरूर सफ़र किजिये लेकिन उन शहरों में कायम न कीजियेगा जहाँ–जहाँ यज़ीद का कब्ज़ा है। बल्कि किसी ऐसी तरफ़ चले जाइयेगा जो यज़ीद की हुकूमत से दूर हो। हाँ यक़ीनन यह चाहने वाले थे, हुसैन (अ०) पर जान निसार करने वाले थे, अपनी अक़्ल के मुताबिक़ बिल्कुल सही मशवेरा दे रहे थे मगर उनकी निगाहें हुसैन (अ०) की ज़ाहिरी ज़िन्दगी तक थीं और हुसैन (अ०) की निगाहें जावेदाना ज़िन्दगी पर थीं। उन लोगों की सोच थीं कि हुसैन (अ०) बच जायें और हुसैन (अ०) की नज़र की वुसअत ये थी कि मैं बचूँ या न बचूँ इस्लाम बच जाये।

हाँ अज़ादाराने इमाम हुसैन (अ०) क़ाफलऐ हुसैनी इस्लाम को बचाने की ख़ातिर मदीने से रवाना हुआ, इस्लाम को बचाने जा रहे थे लेहाज़ा कूफ़ा जो अपना नुमाइन्दा भेजा वो वहाँ इस्लामी तालीमात व हक़ाएक का मुरक्का था वहाँ नाम भी इस्लाम से मुशतक था यानी मुस्लिम था। हाँ अज़ादारों! आज पहली मोहर्रम है, वालिदे माजिद पहली मजलिस में जनाबे मुस्लिम का तज़करा किया करते थे, क्योंकि करबला की कुर्बानियों में पहली कुरबानी जनाबे मुस्लिम की है, वाक़िय–ए–करबला से जनाब मुस्लिम को अलग नहीं किया जा सकता करबला की तमहीद जनाबे मुस्लिम दीबाचाए किताबे करबला जनाबे मुस्लिम, या यूँ अर्ज़ करूँ जिस तरह किताबे अल्लाह बिसमिल्लाह से शुरू होती है उसी तरह से किताबे करबला कुरबानीए जनाबे मुस्लिम से शुरू होती है। किताबे करबला की बिस्मिल्लाह थे जनाबे मुस्लिम। मैं क्या मदह कर सकता हूँ उसकी कि जिसके लिये हुसैन (अ०) ख़त लिख़ते हैं तो उसमें अल्फ़ाज़ हैः हाज़ा अख़ी व इब्ने उम्मी वसक़ती मन अहलेबैती ''ऐ कूफ़े वालो! जानते हो किसको भेज रहा हूँ? ये मेरा भाई है, ये मेरे चचा का बेटा है और ये मेरे अहलेबैत (अ०) में वो है जिस पर मुझे भरोसा है।'' बड़ा फ़र्क़ है अगर मैं कहूँ कि फलाँ मेरा भाई, फलाँ मेरा बेटा तो बात और है लेकिन अगर कोई इन्तेहाई बलन्द मरतबा अपनी तरफ निस्बत देकर कहे कि ये मेरा बेटा ये मेरा भाई तो बात कुछ और है, यानी वैसा है जैसा मेरे बेटे को होना चाहिए। हुसैन (अ०) का ये कहना हाज़ा अख़ी ये मेरा भाई है, यानी मुस्लिम कि अज़मत ये है कि मैं कह रहा हूँ। अपना भाई, जैसा मेरा भाई होना चााहिए वैसे हैं मुस्लिम। हुसैन अ० की निगाहें इंतेखाब ने मुस्लिम को अपनी नुमाइंदगी के लिये मुंतखब किया और ये मुस्लिम की शुजाअत का आलम कि तने तन्हा कूफ़े पहुँचते हैं। मगर शायद मैंने ग़लत कहा कि अकेले गये। जनाबे मुस्लिम के चार फ़रज़न्द, दो को बाप ने अपने साथ रखा और दो को माँ की तस्कीन के लिये माँ के पास छोड़ दिया। मगर अज़ादारो! जब मुस्लिम की ज़ौजा पलट कर मदीने गयी तो न वो बच्चे थे जो बाप के साथ गये थे और न वो बच्चे थे जो माँ के साथ छोड़ दिये गये थे।

मुस्लिम की शुजाअत का ये आलम था कि जब इनकी गिरफ़्तारी के लिये पाँच सौ का दस्ता भेजा गया लेकिन गिरफ़्तार न कर सका। मोहम्मद इब्ने अशअस लिखता है कि ऐ इब्ने ज़्याद और लशकर भेज। पांच सौ और भेजे जाते हैं, वो भी शिकस्त खाते हैं, फिर लिखता है और लशकर भेज। एक मरतबा इब्ने ज़्याद ने कहलवाया कि एक से लड़ने के लिये इतने काफी नहीं तो जब सब बनी हाशिम आ जायेंगे तो क्या आलम होगा? हां मदह वो है जो दुश्मन की भी ज़बान पर हो, मोहम्मदे अशअस जैसा दुश्मन जवाब में कहलवाता है ऐ इब्ने ज़्याद! क्या समझता है कि

कूफे के किसी बनिये बक्क़ाल से लड़ने भेजा है, अरे ये बनी हाशिम की तलवार है। पन्द्रह सौ का लशकर मुस्लिम पर क़ाबू न पा सका। एक मरतबा गढ़ढा खोदा गया। मुस्लिम जोशे शुजाअत में आगे बढ़ रहे थे कि गढ़ढ़े में गिर गये मुंह के भल ज़मीन पर गिरे। अब बहादर मजबूर हो गया। ऊपर से कोई तलवार मार रहा है कोई नैज़ा और कोई पत्थर। इस तरह मजबूरी के आलम में जख़्मी करके जनाबे मुस्लिम को गिरफ़्तार किया गया। क्योंकि मुस्लिम दीबाचए किताबे करबला थे और दीबाचा वो है जिसमें पूरी किताब का खुलासा बयान कर दिया जाता है जो किताब में आने वाला है, तो मुस्लिम की कुर्बानी में पूरी करबला सिमटी हुई मिलती है। शायद इमाम ज़ैनुल आबेदीन अ० शिकायत करते कि ए चचा मैं गिरफ़्तार किया गया, शायद ज़ैनब अ० व उम्मेकुसूम व रबाब अ० कहतीं ऐ मुस्लिम हमारे बाजुओं में रसन बांधी गयी, दिबाचए करबला में जिस तरह बिसमिल्लाह में पूरा कुरान सिमटा हुआ इसी तरह से मुस्लिम की कुरबानियों में कर्बला की तमाम कुर्बानियां सिमट कर आ गयीं। मुस्लिम के हाथ पसे गर्दन से बंधे हुए दरबारे इब्ने ज्याद में लाये जाते हैं। दरवाजे पर क़स्र के लाये गये तो देखा कि सुराहियों में ठण्डा पानी रखा है। सुब्ह से जंग कर रहे थे, प्यास भड़क उठी थी, कहा कोई है जो मुझे पानी पिला दे। कुछ ने कहा कि पानी न दिया जाये लेकिन किसी को ग़ैरत आई और कहा कहा कि अगर हमसे कोई यहूदी या नसरानी भी इस आलम में पानी मांगता तो हम पिला देते अरे ये तो रसूल स० की औलाद हैं।

जामे आब पेश किया गया। मुस्लिम के होंट ज़ख़्मी थे, होंटों का खून पानी में मिल गया, मुस्लिम ने पानी फेंक दिया, दूसरा जाम पेशे किया गया दन्दाने मुबारक जख़्मी हो चुके थे, पानी में आ गये, फरमाया इन्ना लिल्लाहे व इन्ना अलैहे राजेऊन, मालूम होता है अब दुनिया का पानी मेरी किस्मत में नहीं। मैं कहता हूं ऐ मुस्लिम पानी न मिलने का शिकवा न करो, अरे अगर प्यास में पानी पी लेते तो किताबे करबला का खुलासा न बनते, शायद कोई छः महीने का बच्चा शिकायत करता कि चचा अरे मैंने तो प्यास में तीर खाया। (अज्रकुम अलल्लाह)

इब्ने ज़्याद ने हुक्म दिया ले जाओ दारूल अमारा की छत पर और वहाँ जाकर कत्ल करो, क़स्र की छत पर लाये गये, क़ातिल तलवार लेकर बढ़ने लगा। कहा इतनी इजाज़त है कि दो रकअत नमाज़ पढ़ लूँ, इजाज़त मिल गई। जनाबे मुस्लिम ने तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ी। हमारा ये अक़ीदा है कि नमाज़ ख़त्म करके करबला का रूख करते हैं और कहते हैं अस्सलामो अलैका या अबा अबदुल्लाह।

मुझे नहीं मालूम कि ये रस्म कब से चली, मगर जब देखता हूँ तो ये जनाबे मुस्लिम की जारी करदा रस्म है, नमाज़ ख़त्म की और रूख किया मक्के की सिम्त अस्सलामो अलैका या अबा अबदुल्लाह, ऐ भय्या, ऐ हुसैन अ० आप पर मेरा सलाम हो। आप को मालूम है कि आपके भाई पर क्या गुज़र रही है। क़ातिल की तलवार चली, मुस्लिम का सर कट कर गिरा। ज़ालिमों ने जुल्म की इंतेहा ये की कि ग़रीब मुस्लिम की लाश के पैर में रस्सी बांधी गयी और कूफे की गलियों में खींचा गया। शायद मुस्लिम ने हुसैन अ० से कहा हो कि ऐ मेरे आक़ा अगर आप का सर कूफे के बाज़ारों में फिराया गया तो आप के मुस्लिम का लाशा कूफे की गलियों में फिराया गया।

अला लानतुल्लाह अला कौमिज्जालिमीन।

## रुबाई

**मौलाना फ़रज़न्द हुसैन ज़ाख़िर इज्तेहादी**

महशर में भी दुनिया की कहानी होगी<br>
चेहरे पे ज़ईफ़ी की निशानी होगी।<br>
आख़िर मेरी तिफ़ली का पता भी है कहीं<br>
माना दरे जन्नत पे जवानी होगी।